E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
Impact Factor (RJIF): 5.92
IJPSG 2025; 7(8): 86-91
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 13-06-2025
Accepted: 15-07-2025

ललित काण्डपाल
पीएच.डी (Ph.D) शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
ललित काण्डपाल
पीएच.डी (Ph.D) शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत

भारतीय संविधान में राज्यपाल की भूमिका: प्रमुख न्यायिक वादों का विश्लेषण

ललित काण्डपाल

DOI: https://doi.org/10.33545/26646021.2025.v7.i8b.625

सारांश
संविधान के अनुच्छेद 153 के अनुसार, प्रत्येक राज्य के लिए एक राज्यपाल होगा, हालांकि 1956 के सातवें संशोधन ने दो या दो से अधिक राज्यों के लिए एक ही राज्यपाल की नियुक्ति का प्रावधान किया। राज्यपाल का पद एक गरिमामय संवैधानिक पद है जो केंद्र और राज्यों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करता है। राज्यपाल राज्य का संवैधानिक प्रमुख होने के साथ-साथ केंद्र सरकार के एजेंट के रूप में भी कार्य करता है।
स्वतंत्रता के बाद लंबे समय तक एक ही दल का प्रभुत्व रहने के कारण राज्यपाल की भूमिका कम महत्वपूर्ण थी। हालांकि, 1967 के बाद जब कई राज्यों में अलग-अलग दलों की सरकारें बनीं, तो राज्यपालों को अपनी विवेकाधीन शक्तियों का अधिक प्रयोग करना पड़ा, जिससे उनकी भूमिका अधिक प्रमुख हो गई।
कुछ राज्यपालों पर निष्पक्षता की कमी का आरोप लगा है, खासकर जब उन्होंने राष्ट्रपति शासन की सिफारिश की या राज्य विधेयकों को राष्ट्रपति के विचारार्थ रोका। राज्यपालों को अक्सर उनके कार्यकाल से पहले हटाए जाने या स्थानांतरित किए जाने से इस पद की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचा है। सरोजिनी नायडू ने इस पद को "सोने के पिंजरे में बंद चिड़िया" कहा था, जो इसकी सीमित शक्तियों को दर्शाता है। यह भी आलोचना की जाती है कि केंद्र सरकार इस पद का उपयोग अपने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए करती है।

कुटशब्दः विधानमंडल, संवैधानिक तंत्र, न्यायिक सक्रियता, अनुच्छेद 154, अनुच्छेद 200, संघीय व्यवस्था, अनुच्छेद 201, अनुच्छेद 356

प्रस्तावना
भारत के संविधान में राज्य में सरकार की उसी तरह परिकल्पना की गई है जिस तरह से केंद्र में दोनों ही जगह पर संसदीय शासन व्यवस्था को अपनाया गया है, जिस प्रकार केंद्र में राष्ट्रपति का प्रावधान है ठीक उसी प्रकार राज्यों में राज्यपाल का प्रावधान किया गया है। राज्यपाल का पद ब्रिटिश शासन काल के दौरान से ही महत्वपूर्ण रहा है भारत शासन अधिनियम 1958 ने भारत के भारत के प्रशासन की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी ईस्ट इंडिया कंपनी से ब्रिटिश राजशाही को स्थानांतरित कर दी। उसके बाद गवर्नर राजशाही का प्रतिनिधि बन गया और गवर्नर जनरल के देखरेख में कार्य करने लगा। मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों (1919) ने उत्तरदायी सरकार की शुरुआत की, हालाँकि यह एक प्रारंभिक अवस्था में ही थी। फिर भी, राज्यपाल प्रांतीय प्रशासन की धुरी बना रहा। भारत सरकार अधिनियम 1935, के तहत 1937 में भारत चुनाव हुए, छह प्रांतीय विधानमंडलों में कांग्रेस पार्टी को बहुमत प्राप्त हुआ। उन्हें नई व्यवस्था के साथ कार्य करने में कुछ कठिनाइयों का पूर्वाभास था, जिसमें मंत्रियों से अपेक्षा की गई थी कि यदि राज्यपाल अपने उत्तरदायित्व के निर्वहन करने के लिए व्यक्तिगत विवेक का प्रयोग करते है, तो मंत्री बिना किसी आपत्ति के निहित निंदा को स्वीकार कर लेंगे। हालांकि जब भी राज्यपाल अपने व्यक्तिगत निर्णय या विवेक से कार्य करता था, तो वह गवर्नर-जनरल निगरानी और नियंत्रण में कार्य करता था। भारत की स्वतंत्रता के साथ ही राज्यपाल का पद कई नए उत्तरदायित्व के साथ सामने आया।

राज्यपाल की भूमिका के बारे में महत्वपूर्ण विचार
1. राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के विचार
"जितना मैं सरकारी खजाने के एक-एक पैसे को बचाना चाहता हूं, राज्य के राज्यपालों को दूर करना और मुख्यमंत्रियों को एक पूर्ण समकक्ष के रूप में मानना ख़राब अर्थव्यवस्था होगी। हालांकि मैं राज्यपालों को दी जाने वाली हस्तक्षेप की अधिक शक्ति

का विरोध करता हूं, मुझे नहीं लगता कि उन्हें केवल कल्पित व्यक्ति होना चाहिए। उनके पास पर्याप्त शक्ति होनी चाहिए, जिससे वे बेहतर के लिए मंत्रिस्तरीय नीति को प्रभावित कर सकें। अपनी अलग स्थिति में, वे चीजों को उनके उचित परिप्रेक्ष्य में देखने में सक्षम होंगे और इस प्रकार उनके मंत्रिमंडलों द्वारा गलतियों को रोकेंगे। उनका अपने राज्यों में एक व्यापक प्रेरक प्रभाव होना चाहिए।"

"राज्यपाल को टीम की योजना में एक बहुत ही महत्वपूर्ण और अहम स्थान दिया गया था। जब राज्य में संवैधानिक गतिरोध होगा तो वह मध्यस्थ होंगे और वह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम होंगे।"

2. भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोविंद जी के विचार

''राज्यपाल के संवैधानिक पद की एक विशेष गरिमा होती है । राज्य सरकार के मार्ग-दर्शक तथा हमारे संघीय ढांचे की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में राज्यपाल अपना निरंतर योगदान देते हैं । राज्य की जनता राज्यपालों को आदर्शो और मूल्यों के कस्टोडियन के रूप में देखती है ।''

''संवैधानिक व्यवसथा में राज्यपाल की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है । आज जब हम सहकारी संघवाद और देश की प्रगति के हित में स्वस्थ प्रतिस्पर्धात्मक संघवाद यानि कॉम्पीटेटीव फेडरेशन पर जोर दे रहे हैं तो राज्यपाल की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है ।''

3. भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के विचार

"संविधान ने राज्यपाल के लिए एक विशेष भूमिका प्रदान की है। यह पवित्रता के साथ एक स्थिति है। जबकि संविधान द्वारा प्रदान किए गए कई नियंत्रण और संतुलन हैं, राज्यपाल के कार्यालय को दिन-प्रतिदिन की राजनीति से ऊपर उठने और केंद्रीय प्रणाली या प्रणाली से निकलने वाली मजबूरियों को दूर करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। राज्यपाल की भूमिका राजनीति के उतार-चढ़ाव से लोगों की सर्वोत्तम आकांक्षाओं को दूर करना है। यह धर्म के प्रकाश को संरक्षित करने जैसा है ।''

4. माननीय सुप्रीम कोर्ट निर्णय 1979 ; हरगोविंद / रघुकुल तिलक अनुसार

"संविधान राज्यपाल को एक संवैधानिक प्रहरी की भूमिका प्रदान करता है और एक स्वतंत्र संवैधानिक कार्यालय के धारक होने के नाते संघ और राज्य के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में, राज्यपाल केंद्र सरकार के अधीनस्थ या अधीनस्थ एजेंट नहीं है।"

5. सरकारिया, कमीशन रिपोर्ट के विचार

"कोई भी निर्णय लेने से पहले, राज्यपाल को अपनी शपथ को याद करना चाहिए कि वह संविधान का परिरक्षक और रक्षक है। यदि राज्यपाल ऐसा करता है, तो किसी भी संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन होने की संभावना नहीं है, किसी भी संवैधानिक परंपरा के पराजित होने की संभावना नहीं है और उसकी किसी भी कार्रवाई की निंदा होने की संभावना नहीं है।"

"संविधान राज्यपाल को एक संवैधानिक प्रहरी और संघ और राज्य के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी की भूमिका प्रदान करता है। एक स्वतंत्र संवैधानिक पद का धारक होने के कारण राज्यपाल केंद्र सरकार का अधीनस्थ या अधीनस्थ एजेंट नहीं होता है।"

राज्यपाल पद की योग्यता और नियुक्ति: संविधान सभा ने राज्यपाल से संबंधित विभिन्न प्रावधानों पर विस्तार से चर्चा की। दो महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचार किया गया। पहला मुद्दा यह था कि क्या एक निर्वाचित राज्यपाल होना चाहिए। यह माना गया कि एक निर्वाचित राज्यपाल और विधानमंडल के प्रति उत्तरदायी एक मुख्यमंत्री के सह-अस्तित्व से प्रशासन में मतभेद और परिणामस्वरूप कमज़ोरी पैदा हो सकती है। इसलिए एक निर्वाचित राज्यपाल की अवधारणा को एक मनोनीत राज्यपाल के पक्ष में त्याग दिया गया। संविधान सभा में यह स्पष्ट करते हुए कि राज्यपाल को राष्ट्रपति द्वारा क्यों नामित किया जाना चाहिए, निर्वाचित नहीं, जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि "निर्वाचित राज्यपाल कुछ हद तक अलगाववादी प्रांतीय प्रवृत्ति को अन्यथा की तुलना में अधिक प्रोत्साहित करेगा। केंद्र के साथ उसके सामान्य संबंध बहुत कम होंगे।" भारतीय संविधान के अनुच्छेद 157 के अनुसार राज्यपाल पद पर उसे व्यक्ति को नियुक्त किया जा सकता है, जो भारत का नागरिक हो तथा 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो। अनुच्छेद 155 राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। राष्ट्रपति इस संबंध में अधिपत्र जारी किया जाता है। व्यवहार में यह नियुक्ति केंद्र सरकार की मंत्रीपरिषद की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। किसी व्यक्ति को उस राज्य में राज्यपाल नियुक्त नहीं किया जा सकता है, जिस राज्य के वह निवासी है, ताकि वह स्थानीय राजनीति से मुक्त रह सके। यह परंपरा है, बाध्यता नहीं।

सरकारिया आयोग (1983) ने यह अनुशंसा की थी कि- राज्यपाल की नियुक्ति के संदर्भ में मुख्यमंत्री के साथ परामर्श होना चाहिए। वर्तमान में संबंधित राज्य के मुख्यमंत्री से परामर्श करना एक परंपरा है, बाध्यता नहीं है। वेंकटचलैया आयोग (वर्ष 2002) सुझाव दिया गया कि राज्यपालों की नियुक्ति एक समिति द्वारा की जानी चाहिये जिसमें प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष और संबंधित राज्य के मुख्यमंत्री शामिल हों। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2005) ने राज्यपाल की नियुक्ति के संदर्भ में कॉलेजियम व्यवस्था स्थापित करने की अनुशंसा की, आयोग के अनुसार प्रधानमंत्री इस कॉलेजियम में अध्यक्ष जबकि उपराष्ट्रपति, गृहमंत्री लोकसभा अध्यक्ष और लोकसभा में विपक्ष का नेता इस कॉलेजियम के सदस्य होंगे।

राज्यपाल पद की शर्तें: अनुच्छेद 158 राज्यपाल पद की शर्तों का उल्लेख करता है- संसद या राज्य विधान मंडल का कोई सदस्य यदि राज्यपाल नियुक्त किया जाता है तो राज्यपाल का पद ग्रहण करते ही संसद या राज्य विधान मंडल में स्थान रिक्त हो जाएगा। राज्यपाल कोई लाभ का पद ग्रहण नहीं करेगा (हरगोविंद बनाम रघुकुल, 1979) में उच्चतम न्यायालय में निर्णय दिया कि राज्यपाल का पद सरकार के अधीन लाभ का पद नहीं है। राज्यपाल के वेतन भक्तों का निर्धारण संसद द्वारा किया जाता है। यदि किसी एक व्यक्ति को दो या दो से अधिक राज्यों का राज्यपाल नियुक्त किया जाता है तो उनके वेतन व भत्ते के अनुपात का निर्धारण राष्ट्रपति करते हैं।

राज्यपाल की पदावधि: राज्यपाल का कार्यकाल पद ग्रहण से 5 वर्ष की अवधि के लिए है किंतु वास्तव में वह राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यंत पद ग्रहण करता है, इस संबंध में सरकारिया आयोग ने कार्यकाल को 5 वर्ष निश्चित अवधि बनाया जाए, प्रसाद पर्यंत पद धारण करेगा इस प्रावधान को हटा देना चाहिए और राज्य विधानमंडल द्वारा महाभियोग की प्रक्रिया से राज्यपाल को हटाने की अनुशंसा की। संविधान में राज्यपाल को हटाने के आधारों का उल्लेख संविधान में नहीं किया किया गया है। राज्यपाल को केंद्र सरकार के अनुशंसा पर राष्ट्रपति द्वारा किसी भी समय पद से हटा सकता है (सूर्य नारायण बनाम भारत संघ 1982)। राज्यपाल को कई बार राजनीतिक कारणों से हटाया जाता है जैसा कि वी.पी. सिंह के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा सरकार (1989) ने उन सभी राज्यपालों से त्यागपत्र मांग लिया था। जिन्हें कांग्रेस सरकार के द्वारा नियुक्त किया गया था, अंततः कुछ राज्यपालों को बदल गया था, जबकि कुछ को बने रहने दिया गया था। यही प्रक्रिया को 1991 में पी.वी. नरसिंहा राव के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार द्वारा दोहराया गया इसके बाद भी कई उदाहरण देखने को मिले जब केंद सरकार द्वारा अपने हितो की पूर्ति के लिए राज्यपालों को हटा दिया। अतः वी. पी. सिंघल बनाम भारत संघ (2010) के मामले में यह निर्णय दिया गया कि राज्यपाल को राजनीतिक कारणों से नहीं हटाया जाना चाहिए। पूँछी आयोग (2007) ने भी राज्यपाल को हटाने के संदर्भ में महाभियोग की प्रक्रिया अपनाने की अनुशंसा की है। राज्यपाल स्वेछा से राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग कर सकता है।

राज्यपाल तथा राज्यपाल के कर्तव्यों का निर्माण करने वाला हर व्यक्ति शपथ लेगा कि वह श्रद्धापूर्वक पद का कार्यपालन करेगा और संविधान एवं विधि का

परीरक्षण, संरक्षण और प्रतिरक्षण करेगा (अनुच्छेद 159)।

राज्यपाल की कार्यपालिका संबंधी शक्तियां एवम् कर्तव्य: राज्य की कार्यपालिका संबंधित शक्तियां राज्यपाल में निहित होती हैं, राज्यपाल अपनी इन शक्तियों का प्रयोग स्वयं अथवा अधीनस्थ अधिकारियों की सहायता से करते है (अनुच्छेद 154)। संविधान के अनुसार राज्यपाल से अपेक्षा की गई है कि वह विवेकानुसार कार्य करेगा, निम्न मामलों में निर्णय दिया गया कि सामान्यतया राज्यपाल 'अपने मंत्रियों की सलाह के अनुसार ही कार्य कर सकता है, अन्यथा नहीं।' (संजीव का नाम मद्रास राज्य 1970; यू.पी. लोक सेवा आयोग बनाम सुरेश,1987; सुनील कुमार बनाम पश्चिम बंगाल सरकार 1970)। जब राज्य विधान मंडल सदस्यों के एक समूह ने तत्कालीन मुख्यमंत्री से अपना समर्थन वापस ले लिया और राज्यपाल ने मुख्यमंत्री को पद से हटा दिया तथा एक अन्य व्यक्ति को सदन में बहुमत का निर्णय किए बगैर मुख्यमंत्री बना दिया और उच्च न्यायालय ने पूर्व मुख्यमंत्री को बहाल करने की आज्ञा दी, तो उच्चतम न्यायालय के आदेशानुसार विधानसभा का एक विशेष सत्र आहूत किया गया जिसमें मुख्यमंत्री पद के दो दावेदारों के बीच बैलट से निर्णय लिया गया (जगदंबिका पाल बनाम भारत संघ,1998)।

राज्य के महाधिवक्ता की राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों की नियुक्ति राज्यपाल करता है (अनुच्छेद 165,316)।

अनुच्छेद 163 के अनुसार- राज्यपाल अपनी स्वविवेकीय शक्तियों को छोड़कर मंत्रीपरिषद की सलाह पर कार्य करेंगे

मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करता है तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्ति वह मुख्यमंत्री की सलाह पर करता है। सभी मंत्री अपना पद राज्यपाल के प्रसाद पर्यंत ग्रहण करते हैं लेकिन मंत्री परिषद सामूहिक रूप से राज्य विधान मंडल के प्रति उत्तरदाई होती है। व्यवहार में, इसका अर्थ यह है कि केवल विधानसभा में बहुमत का समर्थन प्राप्त व्यक्ति ही मुख्यमंत्री नियुक्त किया जाएगा और मंत्री परिषद तभी तक पद धारण करेंगी जब तक विधानसभा में विश्वास प्राप्त होता है (अनुच्छेद-164)।

अनुच्छेद 166 के अनुसार- राज्यपाल राज्य के संदर्भ में विभागों के कार्य आवंटन के नियम बनाते हैं। मंत्री परिषद का कोई निर्णय सरकारी आदेश के रूप में तब तक लागू नहीं होता है जब तक राज्यपाल के नाम से भी अभिव्यक्त ना किया जाए (केरल राज्य का बनाम लक्ष्मी कुट्टी 1987; बी. एल. कॉटन मिल्स बनाम पश्चिम बंगाल राज्य 1967)।

राज्यपाल की व्यवस्थापिका / विधायी शक्ति: अनुच्छेद 168 के अनुसार, राज्यपाल राज्य विधानमंडल का अंग है। जहां दो सदनों वाले विधान मंडल हैं, वहां वह विधानमंडल के दोनों सदनों की बैठक, बुलाता है और उनका सत्रावसान करता है। वह राज्य विधानसभा का विघटन कर सकता है (अनुच्छेद 174)। वह विधानमंडल के सदस्यों को संबोधित करता है और संदेश भेज सकता है (अनुच्छेद 175,176)। अनुच्छेद 171 के तहत राज्यपाल विधान परिषद के सदस्यों का 1/6 भाग सदस्यों को मनोनीत करते हैं जो साहित्य विज्ञान, कला, सहकारी आंदोलन, समाज सेवा से संबंधित होते हैं।

राज्यपाल अथवा उनके द्वारा नियुक्त व्यक्ति के द्वारा मुख्यमंत्री एवं अन्य मंत्रियों को शपथ / प्रतिज्ञान दिलवाया जाता है (अनुच्छेद 188)।

राज्यपाल की वित्तीय शक्तियां: राज्य का धन विधेयक राज्यपाल की स्वीकृति के पश्चात ही विधानसभा में रखा जा सकता है (अनुच्छेद 199)। राज्यपाल विधान मंडल द्वारा पारित विधेयक को पुनर्विचार हेतु नहीं भेज सकते (अनुच्छेद 200)। राज्यपाल प्रत्येक 5 वर्ष में राज्य के सन्दर्भ में एक वित्त आयोग का गठन करेगा (अनुच्छेद 243I)।

विधानमंडल द्वारा पारित विधेयकों पर राज्यपाल की शक्ति एवम् विवाद: अनुच्छेद 200 के अनुसार राज्यपाल की अनुमति के बिना कोई भी विधेयक कानून नहीं बन सकता है भले ही उसे दोनों सदन पारित कर दें, तो उसके पास चार विकल्प होते है (क) वह विधेयक पर अपनी अनुमति दे; (ख) वह अपनी अनुमति रोक ले; (ग) वह विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रख ले; या (घ) वह विधेयक को पुनर्विचार के लिए विधानमंडल को लौटा दे। अतः राज्यपाल के बारे में कहां जा सकता है कि वह चारों विकल्पों में मंत्रीपरिषद की सलाह पर कार्य करता है। जो भी हो, इस मामले में राज्यपाल द्वारा अधिकार प्रयोग को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है (भारत सेवा आश्रम बनाम गुजरात राज्य, 1987)। प्रथम परंतुक में कहा गया है कि जैसे ही विधेयक उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाता है, वह विधेयक को विधानमंडल को (यदि वह धन विधेयक नहीं है) एक संदेश के साथ लौटा सकता है जिसमें विधानमंडल से विधेयक पर पुनर्विचार करने का अनुरोध किया गया हो। वह ऐसे संशोधनों या परिवर्तनों को प्रस्तुत करने की वांछनीयता का भी सुझाव दे सकता है जिन्हें वह उचित समझे। यदि ऐसे पुनर्विचार पर, विधेयक को संशोधनों के साथ या बिना संशोधनों के पुनः पारित किया जाता है और राज्यपाल के समक्ष अनुमति के लिए प्रस्तुत किया जाता है, तो उसे अपनी अनुमति देनी होगी। दूसरे प्रावधान में कहा गया है कि यदि राज्यपाल की राय में, उनके समक्ष प्रस्तुत विधेयक उच्च न्यायालय की शक्तियों को इस प्रकार कम करता है कि संविधान द्वारा उच्च न्यायालय को जिस पद को भरने के लिए नियुक्त किया गया है, वह खतरे में पड़ जाए, तो वह विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रखने के लिए बाध्य हैं (होचस्ट फार्मास्युटिकल्स बनाम बिहार राज्य, 1983)। अनुच्छेद 200 (जो कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 75 का दो छोटे संशोधनों के साथ पुनरुत्पादन है) अनुमति देने या यह घोषित करने के लिए कि वह अपनी अनुमति रोक रहा है या यह घोषित करने के लिए कि वह इसे राष्ट्रपति की अनुमति के लिए सुरक्षित रख रहा है, कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं करता है। पुरुषोत्तम बनाम केरल राज्य, 1962 में यह माना गया है कि अनुमति देने के लिए कोई समय-सीमा नहीं है। इस निर्णय में निम्नलिखित अतिरिक्त प्रस्ताव दिए गए हैं: (क) विधानमंडल (किसी भी सदन) में लंबित विधेयक विधानसभा के सत्रावसान पर समाप्त नहीं होता, (ख) राज्यपाल या राष्ट्रपति के समक्ष उनकी स्वीकृति के लिए लंबित विधेयक विधानसभा के विघटन पर समाप्त नहीं होता, और (ग) केवल विधान सभा को भंग किया जा सकता है, विधान परिषद को नहीं।

अनुच्छेद 201: राज्यपाल द्वारा कोई विधेयक राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रखा जाता है, वहाँ राष्ट्रपति या तो यह घोषित करेगा कि वह विधेयक पर अपनी अनुमति दे देता है या अपनी अनुमति रोक लेता है। राष्ट्रपति को यह भी अधिकार है कि वह "राज्यपाल को अनुच्छेद 200 के प्रथम प्रावधान में उल्लिखित संदेश के साथ विधेयक को सदन में वापस भेजने का निर्देश दे..." यहाँ भी राष्ट्रपति द्वारा निर्णय लेने की कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं है (सरकारिया आयोग,1987 ने राष्ट्रपति द्वारा 4 माह के अन्दर निर्णय करने की अनुशंसा की है)। ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ विधेयक राष्ट्रपति के पास छह वर्ष या उससे अधिक समय तक लंबित रहे हैं। अनुच्छेद 201 की एक और विशेषता यह है कि जहां राष्ट्रपति, राज्यपाल को विधेयक विधानमंडल को वापस भेजने का निर्देश देता है, और विधानमंडल विधेयक को पुनः पारित कर देता है (संशोधनों के साथ या बिना संशोधनों के) और जब इसे पुनः राष्ट्रपति के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत किया जाता है। तो अनुच्छेद यह नहीं कहता कि राष्ट्रपति अपनी सहमति देने के लिए बाध्य है, जैसा कि अनुच्छेद 201 में राज्यपाल के मामले में कहा गया है। यह आश्चर्यजनक है कि विधानमंडल द्वारा विधेयक पर पुनर्विचार करने, इसे पुनः पारित करने और राष्ट्रपति के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत करने के बाद भी, यदि वह ऐसा चाहे, तो इसे अनुमति न देकर रोका जा सकता है। चूँकि राष्ट्रपति इस संबंध में निर्णय केंद्रीय मंत्रिपरिषद सलाह पर लेते है, इसलिए ऐसा हो सकता है (वास्तव में, जैसा कि तमिलनाडु, पंजाब, तेलंगाना, केरल राज्य के संदर्भ में हुआ) कि जहाँ केंद्र में कोई अन्य दल या समूह सत्ता में हो, वह राष्ट्रपति को विधेयक पर पुनर्विचार के बाद राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किए जाने के बाद भी अपनी सहमति रोकने या उसे ठंडे बस्ते में डालने की सलाह देकर राज्य विधानमंडल की इच्छा को आसानी से निष्प्रभावी और अमान्य कर सकता है। अरुणाचल प्रदेश मामले (नबाम रेबिया

और बामंग फेलिक्स बनाम डिप्टी स्पीकर 2016 में SC का फैसला: "राज्यपाल अनिश्चित काल के लिए किसी विधेयक पर सहमति नहीं रोक सकते हैं, लेकिन उन्हें इसे एक संदेश के साथ विधानसभा को वापस करना होगा और इसमें विधेयक में संशोधन के लिए उनकी सिफारिश शामिल हो सकती है)।"

अनुच्छेद 200 तथा 201 का तमिलनाडु प्रकरण: तमिलनाडु राज्य बनाम तमिलनाडु राज्यपाल के मामले में प्रस्तुत विभिन्न विधेयकों और अन्य प्रस्तावों को अनिश्चित काल तक लंबित रखने के राज्यपाल आर. एन. रवि के फैसले को चुनौती देते हुए सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। तमिलनाडु राज्य, कुछ प्रमुख सार्वजनिक महत्व के मुद्दों पर राज्यपाल की कार्रवाई से व्यथित होकर, संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए , रिट याचिका में उल्लिखित उचित राहत की मांग कर रहा है। याचिकाकर्ता, तमिलनाडु के राज्यपाल द्वारा निम्नलिखित कार्यों के निर्वहन में की गई कार्रवाई, या यूँ कहें कि निष्क्रियता, से व्यथित है: तमिलनाडु राज्य के लिए विधानमंडल द्वारा अधिनियमित 10 विधेयकों पर राज्यपाल द्वारा अपनी स्वीकृति रोक लेना तथा उन्हें राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित रखना।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय (एससी) ने 8 अप्रैल 2025 को, न्यायमूर्ति जेबी पारदीवाला और न्यायमूर्ति आर. महादेवन की पीठ ने राज्यपाल की देरी को गलत माना। अनुच्छेद 142 के तहत विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए, पीठ ने लंबित विधेयकों को स्वीकृत मान लिया। तमिलनाडु राज्य बनाम तमिलनाडु के राज्यपाल, 2023 में पहली बार संविधान के अनुच्छेद 201 के तहत समय सीमा: सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि राष्ट्रपति सहमति को अनिश्चित काल तक विलंबित करके "पूर्ण वीटो" का प्रयोग नहीं कर सकते। निर्णय तीन महीने के भीतर किया जाना चाहिए, और किसी भी देरी का कारण स्पष्ट किया जाना चाहिए और राज्य को सूचित किया जाना चाहिए। सहमति रोकना ठोस और विशिष्ट आधार पर होना चाहिए, मनमाने ढंग से नहीं किया जाना चाहिए। यदि राष्ट्रपति समय-सीमा के भीतर कार्रवाई करने में विफल रहते हैं, तो राज्य न्यायालय से आदेश प्राप्त करने के लिए रिट याचिका दायर कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अनुच्छेद 143 के तहत यदि राज्यपाल द्वारा किसी विधेयक को असंवैधानिकता के आधार पर आरक्षित किया जाता है, तो राष्ट्रपति को सर्वोच्च न्यायालय की राय लेनी चाहिए। यद्यपि यह अनिवार्य नहीं है, फिर भी ऐसे मामलों में सर्वोच्च न्यायालय का संदर्भ अत्यधिक प्रेरक मूल्य रखता है। सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि राज्यपाल के विपरीत, जिन्हें राज्य विधेयक को वापस भेजे जाने के बाद दोबारा पारित होने पर उस पर अपनी सहमति देनी होती है, राष्ट्रपति अनुच्छेद 201 के तहत ऐसा करने के लिए संवैधानिक रूप से बाध्य नहीं हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि अनुच्छेद 201 केवल असाधारण मामलों में ही लागू होता है, जहां राज्य के कानून के संभावित राष्ट्रीय निहितार्थ होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने गृह मंत्रालय द्वारा जारी 2016 के कार्यालय ज्ञापन का हवाला दिया, जिसमें राष्ट्रपति के लिए आरक्षित राज्य विधेयकों पर निर्णय के लिए तीन महीने की समय-सीमा निर्धारित की गई थी। न्यायालय ने सरकारिया आयोग (1988) और पुंछी आयोग (2010) की सिफारिशों का हवाला दिया, जिनमें आरक्षित विधेयकों पर समयबद्ध निर्णय लेने की बात कही गई थी।

राज्यपाल की अध्यादेश जारी करने की शक्ति: अनुच्छेद 213 के अनुसार राज्यपाल उस अवधि के दौरान अध्यादेश जारी कर सकता है जब विधान सभा अथवा दोनों सदनों का (जहां विधानमंडल के दोनों सदन हों) सत्र न चल रहा हो। यह शक्ति वैसी ही है जैसी कि राष्ट्रपति को अनुच्छेद 123 के अधीन प्राप्त है। अध्यादेशों का वैसा ही बल तथा प्रभाव होता है जैसा कि विधानमंडल द्वारा पारित तथा राज्यपाल द्वारा अनुमति-प्राप्त विधियों का होता है। इसके अलावा, उन पर भी विधानमंडल द्वारा पारित विधियों जैसे प्रतिबंध होते हैं। अतः राज्यपाल, राष्ट्रपति के अनुदेशों के बिना कोई अध्यादेश जारी नहीं कर सकता, यदि (i) वैसे ही उपबंध वाले विधेयक के पुरःस्थापन के लिए राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी की अपेक्षा होती, यदि (ii) वैसे ही उपबंध वाले विधेयक को राज्यपाल राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखना आवश्यक समझता, अथवा यदि (iii) वैसे ही उपबंध वाला कोई राज्य-अधिनियम राष्ट्रपति की अनुमति के अभाव में अवैध हो जाता। राज्यपाल द्वारा जारी किए गए हर अध्यादेश को राज्य विधान सभा के समक्ष (दो सदनों वाले राज्य विधानमंडल की दशा में दोनों सदनों के समक्ष) रखना होगा तथा वह विधानमंडल के पुनर्गठन होने के पश्चात पहली बैठक से छह सप्ताह की समाप्ति पर या उससे पूर्व भी लागू नहीं रहेगा यदि उसके निरनुमोदन का संकल्प पारित कर दिया जाता है। राज्यपाल अध्यादेश को किसी भी समय वापस ले सकता है (अनुच्छेद 213)। यदि किसी विधेयक को राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजा हो तो उस पर अध्यादेश जारी नहीं किया जा सकता। राज्यपाल की अध्यादेश जारी करने की शक्तियों के कुख्यात दुरुपयोग को डी.सी. वधवा बनाम बिहार राज्य (1987) में उजागर किया गया था। 1967-1981 के दौरान बिहार के राज्यपाल ने 256 अध्यादेश जारी किए थे। इन सभी को पुनः-पुनः जारी करके बनाए रखा गया। न्यायालय का निर्णय था कि यह कार्य 'लोकतांत्रिक प्रक्रिया का उन्मूलन' था और 'संविधान के प्रति धोखाधड़ी' थी। इस शक्ति का उपयोग तो असाधारण परिस्थितियों का सामना करने के लिए यदाकदा ही किया जाना चाहिए। राजनीतिक स्वार्थ-पूर्ति के लिए उसके दुरुपयोग की अनुमति नहीं दी जा सकती।

अनुच्छेद 191 में उन प्रावधानों का उल्लेख है जिनके आधार पर विधानमंडल के सदस्यों की सदस्यता समाप्त की जाती है। राज्य विधान मंडल के किसी सदस्य की सदस्यता दल बदल को छोड़कर राज्यपाल चुनाव आयोग की राय के आधार पर समाप्त करते है (अनुच्छेद 192)।

राज्यपाल की न्यायिक शक्तियां: अनुच्छेद 217 में यह लिखित है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संदर्भ में राष्ट्रपति, संबंधित राज्य के राज्यपाल से परामर्श करते हैं।

अनुच्छेद 219 के अनुसार, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को शपथ या प्रतिज्ञान राज्यपाल अथवा राज्यपाल द्वारा नियुक्त व्यक्ति द्वारा दिलाई जाती है।

जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति राज्यपाल उच्च न्यायालय से परामर्श करने के बाद करते हैं (अनुच्छेद 233)। जिला न्यायाधीशों के अलावा अन्य न्यायिक अधिकारियों की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा उच्च न्यायालय, लोक सेवा आयोग के परामर्श पर की जाती है(अनुच्छेद 234)।

क्षमा आदि की शक्तियां: राज्यपाल को क्षमा आदि प्रदान करने की शक्ति दी गई है। वह उस विषय के संबंध में, जिस विषय पर उस राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है, किसी विधि के विरुद्ध किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराए गए किसी व्यकित के दंडादेश का निलंबन, परिहार या लघुकरण कर सकता है (अनुच्छेद 161)। के.एम. नानावती बनाम बंबई राज्य, ए. आई. आर. 1961 में उच्चतम न्यायालय का निर्णय था कि राज्यपाल को छूट है कि वह किसी भी समय, यहां तक कि उस समय भी जब मामला उच्चतम न्यायालय में लंबित हो, पूर्ण क्षमा प्रदान कर सकता है लेकिन जब मामला उच्चतम न्यायालय के विचाराधीन हो, उस अवधि के लिए राज्यपाल दंडादेश के निलंबन की अपनी शक्ति का ऐसा प्रयोग नहीं कर सकता। यह कहा गया कि राज्यपाल की निलंबन की शक्ति उच्चतम न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अधीन होगी।

राज्यपाल की आपात उपबंध / राष्ट्रपति शासन के संबंध में शक्तियां: अनुच्छेद 356 के द्वारा राज्य में संवैधानिक तंत्र विफल हो जाए तो राष्ट्रपति शासन स्थापित किया जाता सकता है। राज्यपाल अथवा बिना राज्यपाल के राष्ट्रपति को संवैधानिक तंत्र की विफलता की जानकारी प्राप्त हो तो संबंधित राज्य सरकार को बर्खास्त या भंग किया जा सकता है। संवैधानिक तंत्र की सफलता में निम्न बातों को शामिल किया जाता सकता है- राज्य सरकार द्वारा संघ सरकार के निर्देशों की पालना नहीं करना (अनुच्छेद 365), कोई भी दल सरकार बनाने की स्थिति में न होने पर, राज्य में राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति, कानून व्यवस्था की खराब स्थिति,राज्य में भ्रष्टाचार का होना। राष्ट्रपति शासन लगने पर उच्च न्यायालय में

चुनौती दी जा सकती है। अरुणाचल प्रदेश में नवंबर 2015 से मार्च 2016 के बीच राजनीतिक आवश्यकता के आधार पर संवैधानिक संकट रहा जिसे (नबाम रेबिया बनाम उपसभापति, 2016) में चुनौती दी गई और सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बाद राज्य सरकार को पुनः बहाल किया गया। वर्ष 2016 में उत्तराखण्ड में एतिहासिक फैसले के तहत राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया था। हलाँकि राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने की जिम्मेदारी राज्यपाल की मानी जाती है। लेकिन केन्द्र सरकार ने राष्ट्रपति से राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने का कहा और राष्ट्रपति ने उस पर हस्ताक्षर कर दिया। जबकि राज्यपाल ने 28 मार्च तक कांग्रेस पार्टी का सरकार का बहुमत सिद्ध करने का मौका दिया गया था। ऐसे में राज्य में राज्यपाल के पद की हत्या बताकर सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देने की बात कही गयी। इस पूरे मामले में सबसे अहम भूमिका राज्यपाल हैं। फ्लोर टेस्ट के एक दिन पहले राज्यपाल ने कांग्रेस के 9 बागियों का बर्खास्त कर दिया वहीं इसके जवाब में केन्द्र ने राज्यपाल की बात को अनदेखा कर दिया। डॉ अंबेडकर ने अनुच्छेद 356 के बारे में कहा था कि "यह एक मृत पत्र है जिसका प्रयोग कम से कम किया जाएगा।"

एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) केंद्र-राज्य संबंधों पर शायद सबसे प्रभावशाली निर्णय, एस.आर. बोम्मई ने राज्यपाल की रिपोर्ट के आधार पर अनुच्छेद 356 के तहत मनमाने ढंग से राष्ट्रपति शासन लागू करने के मामले पर विचार किया। यह मामला तब उठा जब कर्नाटक में जनता दल सरकार को राज्यपाल ने बिना शक्ति परीक्षण के बर्खास्त कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसी बर्खास्तगी को असंवैधानिक घोषित करते हुए कहा कि सरकार के बहुमत का परीक्षण करने के लिए "विधानसभा का पटल ही एकमात्र संवैधानिक रूप से स्वीकृत मंच है" (बोम्मई, 1994)। न्यायालय इस मामले में 'संघात्मक शासन व्यवस्था' को संविधान के आधारभूत संरचना माना, अनुच्छेद 356 के तहत राज्यपाल की रिपोर्ट न्यायिक समीक्षा के अधीन है, जिससे राज्यपाल को पहले प्राप्त व्यापक छूट सीमित हो गई। इस फैसले ने राष्ट्रपति शासन लागू करने के लिए दिशानिर्देश भी निर्धारित किए, जिससे यह अधिक जवाबदेह और वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित हो गया। यह निर्णय एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ, क्योंकि इससे अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग में कमी आई। 1994 से पहले, 1950 और 1990 के बीच अनुच्छेद 356 का 90 से अधिक बार प्रयोग किया गया था। बोम्मई के बाद, इस संख्या में उल्लेखनीय गिरावट देखी गई। अब केवल कुछ ही बार इसका प्रयोग किया गया, जो न्यायिक सक्रियता के पुनर्स्थापनात्मक प्रभाव को दर्शाता है (ऑस्टिन, 1999)। 1969 में तमिलनाडु राज्य द्वारा पी.वी राजमन्नार एवम् अनुच्छेद 356 व 365 को समाप्त कर दिया जाए। सरकारिया आयोग ने अनुच्छेद 356 का प्रयोग अंतिम विकल्प के रूप में किया जाने की अनुशंसा की।

अनुच्छेद 361: राष्ट्रपति और राज्यपालों और राजप्रमुखों का संरक्षण राष्ट्रपति अथवा राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख अपने पद की शक्तियों के प्रयोग और कर्तब्यों के पालन के लिए या उन शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करते हुए अपने द्वारा किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के लिए किसी न्यायालय को उत्तर दायी नहीं होगा। किसी राज्य के राज्यपाल के विरूद्ध उसकी पदावधि के दौरान किसी न्यायालय में किसी भी प्रकार की दांडिक कार्यवाही सस्थित नहीं की जायेगी या चालू नहीं रखी जायेगी। राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल की पदावधि के दौरान उसकी गिरफ्तारी या कारावास के लिए किसी न्यायालय में कोई आदेशिका निकाली नहीं जायेगी।

अनुच्छेद 371 में राज्यपाल की भूमिका

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 371 (और इससे जुड़े उप-अनुच्छेदों) में कुछ राज्यों के लिए राज्यपाल को विशेष भूमिका और शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। ये प्रावधान राज्यों की सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं, ऐतिहासिक परिस्थितियों और स्थानीय जनजातीय संरचना की सुरक्षा हेतु बनाए गए हैं। राज्यवार विवरण राज्यपाल की भूमिका विशेष रूप से वर्णित है- 1. अनुच्छेद 371 (महाराष्ट्र एवं गुजरात) राज्यपाल को अधिकार है कि वे "विकास बोर्डों की स्थापना करें" (विदर्भ, मराठवाड़ा आदि क्षेत्रों के लिए)। 2. अनुच्छेद 371A (नागालैंड) राज्यपाल को यह सुनिश्चित करना होता है कि कोई संसद का कानून तब तक राज्य में लागू न हो जब तक कि राज्य विधानसभा सहमति न दे, विशेष रूप से धार्मिक/सामाजिक रीतियों नागा customary laws भूमि और संसाधनों के स्वामित्व आदि मामलों में। 3. अनुच्छेद 371C (मणिपुर) राज्यपाल को यह अधिकार है कि वे मणिपुर के जनजातीय क्षेत्रों से संबंधित विशेष प्रशासनिक समिति का गठन करें। वे समय-समय पर राष्ट्रपति को रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं। 4. अनुच्छेद 371F (सिक्किम) राज्यपाल सिक्किम की संवैधानिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे विशेष जिम्मेदारी के तहत कार्य करते हैं ताकि सिक्किम समझौते (1975) की भावना बनी रहे। 5. अनुच्छेद 371H (अरुणाचल प्रदेश) में कानून व्यवस्था की स्थिति की निगरानी करना, राज्य की विधानसभा को भंग करने या सत्र बुलाने की शक्ति। 6. अनुच्छेद 371J (कर्नाटक - हैदराबाद-कर्नाटक क्षेत्र) सरकारी नौकरियों और शिक्षा में आरक्षण सुनिश्चित करने हेतु अधिसूचना जारी करना।

निष्कर्ष

राज्यपाल की संविधानिक स्थिति भारतीय संविधान में राज्यपाल का पद एक महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रावधान है, जिसे राज्य के कार्यपालिका प्रमुख के रूप में स्थापित किया गया है। यद्यपि वह औपचारिक रूप से राज्य का प्रमुख होता है, किंतु उसका वास्तविक कार्य निर्वाचित मंत्रिपरिषद की सलाह पर आधारित होता है। इस व्यवस्था से स्पष्ट होता है कि राज्यपाल का पद मूलतः सांविधानिक प्रमुख का है, कार्यपालिका का नहीं। संविधान निर्माताओं ने राज्यपाल को एक तटस्थ, निष्पक्ष और गैर-राजनीतिक संस्था के रूप में कल्पित किया था, जो राज्य में संविधान की रक्षा करे और संकट की स्थिति में केंद्र सरकार को आवश्यक सूचनाएं प्रदान करे। परंतु व्यावहारिक राजनीति में यह भूमिका कई बार विकृत हुई है। राज्यपाल की नियुक्ति में केंद्र की राजनीतिक इच्छाशक्ति, दल-बदल और राष्ट्रपति शासन की अनुशंसा जैसे निर्णयों में उनकी भूमिका ने इस पद की निष्पक्षता पर प्रश्नचिन्ह लगाए हैं। नबाम रेबिया बनाम डिप्टी स्पीकर (2016), एस.आर. बोम्मई मामला(1994), जैसे न्यायिक निर्णयों ने यह सिद्ध किया है कि राज्यपाल की भूमिका संवैधानिक सीमाओं में बंधी हुई है। वे न तो मंत्रिपरिषद की सलाह को अनदेखा कर सकते हैं और न ही अपनी इच्छा से विधानसभा सत्र बुला सकते हैं। राज्यपाल की संवैधानिक स्थिति को सुदृढ़ और मर्यादित बनाए रखने के लिए निम्न सुधार आवश्यक हैं:- राज्यपाल की नियुक्ति में राजनीतिक पक्षपात से बचा जाए और योग्यता व तटस्थता को प्राथमिकता दी जाए। उनकी भूमिका, अधिकार और कर्तव्यों की स्पष्ट व्याख्या संविधान या संसद द्वारा की जाए। न्यायिक निर्णयों के अनुरूप राज्यपाल की शक्तियों को विधिसम्मत रूप से सीमित किया जाए। संघवाद की भावना को बनाए रखने के लिए राज्यपाल को केंद्र के राजनीतिक हस्तक्षेप से स्वतंत्र रखा जाए। राज्यपाल की संवैधानिक स्थिति तभी सार्थक मानी जा सकती है जब वह संवैधानिक नैतिकता, निष्पक्षता और लोकतांत्रिक मर्यादा के अनुरूप कार्य करे। यदि राज्यपाल राजनीति से प्रेरित होकर कार्य करता है, तो वह न केवल संविधान की आत्मा के विरुद्ध है, बल्कि भारत के संघीय ढांचे के लिए भी घातक है।

सन्दर्भ सूची

1. लक्ष्मीकांत एम. 2018 , पंचम संस्करण, भारत की राजव्यवस्था, McGraw Hill Education private limited
2. काश्यप, सुभाष, 2020, हमारा संविधान, गोपसन्स पेपर्स लिमिटेड
3. बेयर एक्ट, भारत का संविधान, Law literature Publication(उपलब्ध www.lawliterature.in)
4. बसु, दुर्गादास, 2019, लेक्सिस नेक्सिस बुक्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, डेल्ही
5. लक्ष्मीकांत एम. 2012, लोक प्रशासन , McGraw Hill Education

private limited
6. डॉ. अरुण कुमार वर्मा. राज्यपाल की भूमिका का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक अध्ययन. Int J PoliticalSci Governance 2024;6(2):101-104 DOI:10.33545/26646021.2024.v6.i2b.372
7. Rameshwar Prasad v. Union of India, (2006) 2 SCC 1.
8. S.R. Bommai v. Union of India, (1994) 3 SCC 1.
9. Sarkaria Commission. (1988). Report of the Commission on Centre-State Relations (Volumes I-IV)
10. Seervai, H. M. (2005), Constitutional Law of India (4th ed., Vols. 1-3). Universal Law Publishing. 24. Shamsher Singh v. State of Punjab, (1974) 2 SCC 831
11. Singhal, B. P. v. Union of India, (2010) 6 SCC 331.
12. Supreme Court of India. (1974). Shamsher Singh v. State of Punjab, (1974) 2 SCC 831.
13. https://rajbhavancg.gov.in/honorable-governors/Role-of-the-governor.php
14. https://interstatecouncil.gov.in//wp-content/uploads/2015/06/CHAPTERV.pdf
15. https://sansad.in/ls/hi/debates/historical?
16. https://indiankanoon.org/doc/82729634/
17. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-editorials/article-356-and-judicial-activism
18. https://www.scobserver.in/cases/pendency-of-bills-before-tamil-nadu-governor-the-state-of-tamil-nadu-v-governor-of-tamil-nadu/
19. https://web.archive.org/web/20120527170538/http://arc.gov.in/
20. https://ijaer.org/admin/uploads/paper/file2/qDvIMcR2bJ0WmBIt7ooSrw==1.pdf
21. https://www.bbc.com/hindi/articles/c4g25e6xm2jo
22. https://indianexpress.com/article/upsc-current-affairs/upsc-essentials/governor-vs-state-supreme-court-draws-the-line-9984203/